।। अथ श्रीसाईसच्चरित।। अध्याय ४३ वा।।

।। श्रीगणेशाय नमः।। श्रीसरस्वत्यै नमः।। श्रीगुरुभ्यो नमः।। श्रीकुलदेवतायै नमः।। श्रीसीतारामचंद्राभ्यां नमः।। श्रीसद्गुरुसाईनाथाय नमः।। पूर्वाध्यायीं झालें निरूपण संतसाईसमर्थ-निर्याण। आतां जें अवशेष अपूर्ण। होईल कीं संपूर्ण ये ठायीं।।१।। साईलागी प्रेम अद्भुत। तें उपजवी तोचि समर्थ। हेमाड तयाचे चरणीं निरत। रेखाटीत कीं तच्चरित।।२।। तोचि देई भक्तिप्रेमा। तोचि वाढवी चरित्रमहिमा। तेणेंचि गौरव भजनधर्मा। येई उपरमा संसार।।३।। म्हणोनि कायावाचामनें। तया माझीं सहस्त्रान्त नमनें। चिंतवें न त्याचा महिमा चिंतने। केवळ अनन्यें शरण रिघें।।४।। सांचला पापाचा मळ। तो धुऊनि काढावया सकळ। करावया अंतर निर्मळ। इतर निष्फळ साधन।।५।। करणें हरिभक्तयशस्मरण। तयांचें भजन अथवा कीर्तन। त्यावीण चित्तशुद्धीसी साधन। सोपें न आन शोधितां।।६।। असो गतकथानुसंधान। करूं संकलित पर्यालोचन। साईनिजानंदावस्थान। चालवूं व्याख्यान पुढारा।।७।। मागां साद्यंत जाहलें कथन। विजयादशमीसचि कां प्रयाण। तात्याबामिषें भविष्यनिवेदन। आधींच कैसेनि जाहलें।।८।। पुढें होतां देहावसान। राखूनियां धर्मावधान। कैसें लक्ष्मीस केलें दान। जाहलें निरूपण समग्र।।९।। आतां ये अध्यायीं कथन। कैसें निकट येतां निधन। साई करीत रामायणश्रवण। हितार्थ ब्राह्मणमुखानें।।१०।। कैसें समाधिस्थान-नियोजन। कैसें अलक्षित इष्टिका-पतन। कैसें समाधिस्थान-नियोजन। दत्तावधान परिसावें।।११।। तैसेंच एकदां ब्रह्मांडीं प्राण। चढवूनि बैसतां तीन दिन। कैंची समाधि, तेंचि देहावसान। निश्चितमन जन झाले।।१२।। केली उत्तरविधीची तयारी। अवचित बाबा देहावधारी। येतांचि लोक दचकले अंतरी। कैसी ते परी परिसिजे।।१३।। असो आता हे निर्याणकथा। श्रोते श्रमतील श्रवण करितां। ही तों दहावसनाची वार्ता। न रूचे चित्ता कवणाच्या।।१४।। परी हें साधुसंतांचे निर्याण। श्रोत्यांवक्त्यां करील पावन। विस्तारभयास्तव भागशः श्रवण। करावें समाधान राही तों।।१५।। देहत्यागें अगम्यगति। निजप्राप्ति सुखाची वसती। बाबा पावले अक्षय स्थिति। पुनरावृत्तीविरहित।।१६।। देहधारणें होते व्यक्त। देहत्यागें पावले अव्यक्त। जरी एकांग-अवतार समाप्त। सर्वांग सुव्यक्त लाधलें।।१७।। एकदेशीयत्वा मुकले। सर्वगतत्वातें पावले। पूर्णपणें सनातन झाले। निजीं समरसले निजत्वें।।१८।। साई सकळांचें जीवन। साई सकळांचा जीव प्राण। साईवीण ग्रामवासी जन। हीन दीन जाहले।।१९।। देह पडतां निचेष्टित। जाहला एकचि आकांत। आबालवृद्ध चिंताक्रांत। जाहला प्राणान्त समस्तां।।२०।। न ज्वरादि लौकिक बाधा। पाठीस लागती प्रपंचबद्धा। योगियांच्या वाटे कदा। अमर्यादा न करिती।।२१।। चेतवोनियां निजतेजातें। संत दाहिती निजदेहातें। तोच कीं प्रकार निजहातें। बाबा करिते जाहले।।२२।। न व्हावें तें होऊनि गेलें। महाराज सायुज्यीं समरसले। जन अत्यंत हिरमुसले। कुसमुसले मनांत।।२३।। बरें होतें नसतों गेलों। अंतसमयींच्या भेटीस मुकलों। असतों कांही उपयोगा आलों। भुलीं भरलों प्रसंगीं।।२४।। ऐशा नानाविध विचारांनी। खिन्न झाला जो तो मनीं। बाबांच्या काय अंतःकरणीं। असेल तें कोणी जाणावें।।२५।। नाहीं घरघर नाहीं श्वास। नाहीं खांसी नाहीं कास। नाहीं जीवाची कासावीस। केलें उल्लासें प्रयाण।।२६।। आतां कैचें साईदर्शन। कैंचे साईपदसंवाहन। कैंचें साईचरणक्षाळण। तीर्थप्राशन तें कैंचें।।२७।। तरी मग ते भक्त प्रेमळ। आली पाहोनि अंतवेळ। दूर केलें कां असतां जवळ। तयांस तळमळ लाविली कां।।२८।। सर्वचि जीवाची भक्तमंडळी। पाहूनि जवळी अंतकाळी। समयीं बाबांचे प्रेमास उसळी। अंतकाळीं येती कीं।।२९।। पावावया सायुज्यसदन। आडवें येतें प्रेमबंधन। वेळीं न करितां तयांचे छेदन। मन निर्वासन कैसेनी।।३०।। ऐसें न घडतां देह पडला। सवेंच चढला जीव धडधडला। तात्काळ नवा संसार

जडला। बाजार उघडला वासनेचा।।३१।। टाळावया हा प्रकार। साधुसंत दक्ष निरंतर। बाबांच्याही मनाचा निर्धार। लोकव्यवहार रक्षावा।।३२।। अंतकाळीं हीच सावधता। शांतता आणि एकांतता। ध्येयमूर्ति वायी चित्ता। विक्षेपताविरहित।।३३।। ''अंते मतिः सा गतिः''। हें तों प्रसिद्ध सर्व जाणती। मगवद्‌भक्त स्वयें आचरती। लोकसंग्रह-रीती हे।।३४।। अवकाश चवदा दिवस राहिला। काळ बाबांचा जवळ आला। म्हणोनि बाबांनी वझे योजिला। वाचावयाला रामविजय।।३५।। मशिदींत वझे बैसले। पोथी-पारायण सुरू झालें। बाबा श्रवण करूं लागले। दिवस गेले कीं आठ।।३६।। पुढें बाबा आज्ञा करीत। पोथी चालवा अस्खलित। ऐसे तीन दिवस-रात वझे ती वाचीत राहिले।।३७।। पूर्ण अकरा दिवस बैसले। पुढें अशक्तपणें ते थकले। वाचतां वाचतां कंटाळले। ऐसे गेले तीन दिन।।३८।। पुढें बाबांनी काय केलें। पोथीवाचन समाप्त करविलें। वझ्यांस तेथूनि घालवूनि लाविलें। आपण राहिले निवांत।।३९।। घालवूनि लावण्याचे कारण। म्हणतील श्रोते करवा की श्रवण। करितों यथामति निवेदन। दत्तावधान परिसावें।।४०।। निकट येतां देहावसान साधुसंत आणि सज्जन। घेती वाचवूनि पोथी पुराण। सावधान परिसती।।४१।। शुकाचार्य दिवस सात। कथिते जाले महाभागवत। ऐकूनि धाला राजा परीक्षित। सुखें देहान्त लाधला।।४२।। श्रवण करितां भगवल्लीला। भगवन्मूर्ति देखतां डोळां। अंतकाळ जयाचा जाहला। तेणेंचि साधिला निजस्वार्थ।।४३।। ही तों लोकप्रवृत्तिस्थिति। संत निरंतर स्वयें आचरती। लोकसंग्रहमार्ग न मोडिती। किंबहुना अवतरती तदर्थचि।।४४।। जयां या भौतिकपिंडीं अनास्था। तयां देहावसानावस्था। नाहीं दुःखशोकावेगता। ही स्वाभाविकता तयांची।।४५।। असो येथें श्रोतां शंकिजे। ब्रह्मसुखें सुखावले जे। तयांसी मायामोहें आतळिजे। बोल हा साजे कैसेनी।।४६।। जे स्वरूपीं सावधान। ''अल्ला मालिक'' अनुसंधान। तयांसी भक्तांचे सन्निधान। प्रतिबंधन कैसेनी।।४७।। तयाचा तो प्रपंच सरला। परमार्थही ठाईच ठेला। द्वंद्वभाव समूळ गेला। स्वयें संचला स्वरूप।।४८।। अक्षरें अक्षर सकळ सत्य । यांत अणुमात्र नाहीं असत्य। परी लोकसंग्रह-अवतारकृत्य। करूनि कृतकृत्य संतजन।।४९।। संत षड्‌भाव-विकारवर्जित। जे निरंतर अप्रकट स्थित। भक्तोद्वारार्थ प्रकटीभूत। निधन किंभूत तयांते।।५०।। देहेंद्रियसंयोग तें जनन। देहेंद्रियवियोग तें मरण। हें पाशबंधन वा उकलन। जन्ममरण या नांव।।५१।। जननापाठीं चिकटलें मरण। एकाहूनि एक अभिन्न। मरण जीवप्रकृतिलक्षण। जीवाचें जीवन ती विकृति।।५२।। मरण मारूनि जे उरती। पाय काळाचे शिरीं जे देती। तयां काय आयुर्दायाची क्षिती। अवतरती जे स्वेच्छेनें।।५३।। भक्तकल्याणैकवासना। तेणें जे धरिती अवतार नाना। ते काय आतळती जन्ममरणा। मिथ्या कल्पना या दोन्ही।।५४।। देहपाताआधींच देख। जेणे देहाची केली राख। तयासी मरणाचा कायसा धाक। मरण हे खाक जयापुढें।।५५।। मरण ही देहाची प्रकृति। मरण ही देहाची सुस्थिति । जीवन ही देहाची विकृति। विचारवंती विचारिजे।।५६।। साईसमर्थ आनंदघन। ठावें न जयां देहाचें जनन। तयांच्या देहासी कैसे मरण। देहस्फुरणवर्जित ते।।५७।। साई परब्रह्म पूर्ण। तयां कैंचें जन्म-मरण। ब्रह्मसत्यत्वें जगन्मिथ्यापण। देहाचें भान कैंचें त्यां।।५८।। प्राणधारण वा विसर्जन। अलक्ष्यरूपें परिभ्रमण। हें तों स्वच्छंदयोगक्रीडन। भक्तोद्धारणनिमित्तें।।५९।। म्हणती रवीसी लागलें ग्रहण। झाला की हो खग्रास पूर्ण। हा तों केवळ दृष्टीचा दोषगुण। संतांसी मरण तैसेंचि।।६०।। देह ही केवळ उपाधि। तयां कैंची आधि-व्याधि। असल्या काहीं प्रारब्धानुबंधीं। तयाची न शुध्दी तयांला।।६१।। भक्तपूर्वार्जितीं तो संचला। अव्यक्तरूपीं भक्तीं भरला। तो हा भक्तकैवारार्थ प्रकटला। शिरडींत दिसला तेव्हांचि।।६२।। आतां भक्तकार्यार्थ संपला। म्हणूनि म्हणती देह ठेविला। कोण विश्वासील या बोला। गति योग्याला काय हे।।६३।। इच्छामरणी साई समर्थ। देह जाळिला योगाग्नींत। स्वयें समरसले अव्यक्तांत। भक्तहृदयांत ते ठेले।।६४।। जयांचे केवळ नाम स्मरतां। जन्म-मरणाची नुरे वार्ता । तयास कैंची मरणावस्था। पूर्वील अव्यक्तता तो पावे।।६५।।

उल्लंघोनि जडस्थिति। बाबा समरसले अव्यक्तीं। तेथेंही भोगिती स्वरूपस्थिति। सदा जागविती भक्तांतें।।६६।। सचैतन्य जो मुसमुसला। भक्तहृदयीं जो अढळ ठसला। तो देह काय म्हणावा निमाला। बोल हा मनाला मानेना।।६७।। म्हणोनि हा अनाद्यनंत साई। अभंग राहील विश्वप्रलयीं। जन्म-मरणांचिया अपायीं। न कदाही पडेल।।६८।। महाराज ज्ञानोबा काय गेले। तीन शतकांतीं दर्शन दिधलें। नाथमहाराज भेटूनि आले। उपकार केले जगावर।।६९।। जैसे ते नाथ कृपावंत। पैठणींची जाहली ज्योत। तुकाराम महाराज देहूंत। आळंदींत नरसिंहसरस्वती।।७०।। समर्थ रामदास परळींत। अक्कलकोटकर अक्कलकोटांत। प्रभुमाणिक हुमणाबादेंत। साई हे शिरडींत तैसेचि।।७१।। जया मनी जैसा भाव। आजही तया तैसा अनुभव। हा सिद्धचि जयाचा प्रभाव। मरणभाव कैंचा त्या।।७२।। तो हा भक्तकाजकैवारी। देह ठेविला शिरडीभीतरीं। स्वरूपें भरलासे चराचरीं। लीलावतारी समर्थ।।७३।। आतां काय आहे शिरडींत। समर्थ जाहले ब्रह्मीभूत। ऐसी न शंका यावी मनांत। मरणातीत श्रीसाई।।७४।। संत मुळींच गर्भातीत। परोपकारार्थ प्रकट होत। ब्रह्मस्वरूप मूर्ति मंत। भाग्यवंत अवतरती।।७५।। जन्म आणि मरणस्थिती। अवतारीयां कदा न ये ती। कार्य सरतां ते स्वरूपीं मिळती। समरसती ते अव्यक्तीं।।७६।। अवघा देह साडेतीन हात। बाबा काय त्यांतचि समात। ते विशिष्ट वर्णस्वरूपयुक्त। हें तों अयुक्त बोलणें।।७७। आणिमा-गरिमादि अष्टसिद्धी। आलिया गेलिया क्षय ना बुद्धि। स्वयेंचि अखंड जयाची समृद्धि। ऐसी प्रसिद्धि तयांची।।७८।। ऐसिया महानुभायांचा उदय। लोककल्याण हाचि आशय। उदयासीं आहे स्थिति विलय। लोकसंग्रहमय संत।।७९।। जन्मभ्रांति मृत्युभ्रांति। आत्मैकत्व अविनाश स्थिति। स्वप्नामाजील सुखसंपत्ति। तेचि परिस्थिति तयांची।।८०।। ना तरी जो ज्ञाननिधान। सदैव जया आत्मानुसंधान। तयासी देहाचें जोपासन। आणीक पतन सारिखें।।८१।। असो पडलें बाबांचे शरीर। कोसळला दुःखाचा डोंगर। हाहाकार शिरडीभर। एकचि कहर उसळला।।८२।। ऐकूनि बाबांचे निर्याण। वार्ता खोंचली जैसा बाण। पडलें नित्य व्यवसाया खाण। दाणादाण उडाली।।८३।। पसरतां ती अमंगल मात। सकळांसी गमला वज्राघात। विचारी बैसले निवांत। इतरीं आकांत मांडिला।।८४।। अति आवडीचेनि पडिभांरे। कंठ तयांचा दाटे गहिंवरें। दुःखाश्रुनीर नयनीं पाझरे। ''शिव शिव हरे'' उद्गारले।।८५।। घरोघरीं झाली हडबड। उडाली एकचि गडबड। छातींत भरली धडधड। लोक दडदड धांविन्नले।।८६।। महाराजांचे देहावसान। प्राणांतचि ओढवला ग्रामस्थां पूर्ण। म्हणती देवा हा प्रसंग दारूण। हृदयाविदारण झालें गा।।८७।। जो उठे तो पळत सुटे। मशीद मंडप गच्च दाटे। अवस्था पाहोनि हृदय फाटे। कंठ नाटे दुःखानें।।८८।। गेलें शिरडीचें वैभव सरलें। सुखसौभाग्य सर्व हरपलें। डोळे सर्वांचे अश्रूंनीं भरले। धैर्य भंगलें सकळांचें।।८९।। काय त्या मशिदीची महती। सप्तपुऱ्यांत जिची गणती। 'द्वारकामाई' जीस म्हणती। बाबा निश्चितीं सदैव।।९०।। असो निर्याण, निर्वाण वा निधन। द्वारका सायुज्यमुक्तीचें स्थान। जया ईश्वरीं नित्यानुसंधान। तया अवस्थान ये ठायीं।।९१।। तो हा गुरूराज साईराय। भक्तकनवाळू बापमाय। भक्तां विश्रांतीचा ठाय। आठव होय नित्याची।।९२।। बाबांवीण शिरडी ओस। दाही दिशा शून्य उदास। प्राण जातां जे शरीरास। कळा शिरडीस ते आली।।९३।। सुकोनि जातां तळ्यांतींल जीवस। तळमळती जैसे आंतील मीन। तैसे झाले शिरडीचे जन। कलाहीन उद्विग्न।।९४।। कमलावीण सरोवर। पुत्राविण शून्य घर। कीं दीपावीण मंदिर। मशीदपरिसर तो तेवीं।।९५।। कीं घरधन्यावीण घर। कीं राजयावीण नगर। कीं द्रव्यावांचूनि भांडार। शिरडी कांतार बाबांविणें।।९६।। जननी जैसी अर्भका। किंवा मेघोदक चातका। तेंचि प्रेम शिरडीचे लोकां। आणिक भक्तां सकळिकां।।९७।। शिरडी झाली कलाहीन। मृतप्राय हीन दीन। जीवनेंवीण जेंवी मीन। तेवीं जन तळमळती।।९८।। वर्जितां कांतां निज-भ्रतारें। अथवा माता स्तनींचीं पोरें। जैसीं गाईचीं चुकलीं वासरें। लहान थोरें त्यापरी।।९९।। अनिवार हे दुःखावस्था। झाली शिरडीच्या जनां

समस्तां। बिदोबिदीं अस्तावेस्ता। जन चौरस्ता धांवती।।१००।। साईमुळेंच शिरडी पवित्र। साईमुळेंच शिरडी चरित्र। साईमुळेच शिरडी क्षेत्र। साईच छत्र सर्वांते।।१०१।। कोणी करी आक्रंदन। कोणी तेथें घेई लोळण। कोणी पडे मूर्च्छापन्न। दुःखापन्न जन झाले।।१०२।। दुःखाश्रूंनीं स्त्रवती नयन। नरनारी अति उद्विग्न। टाकोनियां अन्नपाद। दीनवदन तीं झालीं।।१०३।। पाहोनि बाबांची ते अवस्था। ग्रामस्थांसी परमावस्था। आबालवृद्ध भक्तां समस्तां। महदस्वस्थता पातली।।१०४।। जेंथें गोड कथा सुरस। जेथें रोज आनंद बहुवस। जेथें शिरावया न मिळे घस। ते मशीद उद्वस तंव दिसें।।१०५।। ''नित्यश्री नित्यमंगल''। होती जी शिरडी पूर्वी सकळ। बाबाचि एक कारण मूळ। तेणें हळहळ ग्रामस्थां।।१०६।। आकंदकंदा आनंदविग्रहा। भक्तकार्यार्थ धरिलें देहा। तो अर्थ संपादूनि अहाहा। नगरीं, विदेहा पावलासी।।१०७।। अष्टौप्रहर निरलस। कळकळीचा हतोपदेश। करीतसां कीं रात्रंदिवस। बुद्धिभ्रंश आम्हां तैं।।१०८।। जैसें उपड्या घड्यावर पाणी। उपदेश तैसा आम्हांलागुनी। गेला वरचेवर वाहुनी। बिंदुहि ठिकाणीं लाधेना।।१०९।। ''तुम्ही कोणासी बोलतां उणें। मजला तात्काळ येतें दुखणें''। पदोपदीं हें आपुलें सांगणे। परी न मानणें तें आम्ही।।११०।। ऐसे आपुले अपराधी किती। मानिली नाहीं ज्यांनी ही सदुक्ति। तयांची आज्ञाभंगनिष्कृति। एणे रीतीं फेडिली कां।।१११।। बाबा त्या सकळांचें पाप। त्याचें भरलें कां हे माप। आतां होऊनि काय अनुताप। भोगावें आपाप भोक्तृत्व।।११२।। तेणेंचि आम्हांतें कंटाळलां। तरीच कां पडद्याआड झालां। आम्हांवरी हा अवचित घाला। काळें घातला कैसा कीं।।११३।। कानीं कपाळीं ओरड करितां। कंठासि तुमचे कोरड पडतां। कंटाळलां वाटतें चित्तां। आमुची उदासता देखोनि।।११४।। म्हणोनि आम्हांवरी रूसलां। पूर्वप्रेम सारें विसरलां। कीं ऋणानुबंधचि आजि सरला। कीं ओसरला स्नेहपान्हा।।११५।। आपण इतुके सत्वर जाते। ऐसें जरी आधी समजतें। तरी फाचि बरवें होतें। सावध राहते जन आधीं।।११६।। आम्ही सकळ सुस्त राहिलों। झोपां घेत स्वस्थ बैसलों। अखेर हे ऐसे फसलों। असलों नसलों सारिखे।।११७।। झालों आम्ही गुरूद्रोही। वेळीं काहींच केलें नाही। स्वस्थ बैसावें तरी तेंही। घडलें नाहीं आम्हांतें।।११८।। लांबलांबून शिरडीसी जावें। तेथेंही चकाट्या पिटीत बैसावें। तीर्थासी आलों हें समूळ विसरावें। तेथेंही आचरावें यथेच्छ।।११९।। तऱ्हेतऱ्हेचे भक्त अनेक। ज्ञानी अभिमानी भावार्थी तार्किक। जया सद्रूपें अवघे एक। नेणे न्यूनाधिक जो भेद।।१२०।। जगीं भगवंतावांचून। दृष्टीं न ज्याच्या पदार्थ आन। ऐसें जयाचें देखणेपण। जो न आपणही दुजा।।१२१।। भक्त हेही स्वयें ईश्वर। मी गुरूही, नव्हे इतर। उभयतांसी स्वस्वरूपविसर। भेद हे परस्पर त्यायोगें।।१२२।। वस्तुतः ईश्वरचि आहों आपण। परी परमार्थ स्वस्वरूपविस्मरण। हेंचि मुख्य भेदाचें लक्षण। अधःपतन तें हेंच।।१२३।। सार्वभौमा स्वप्न होई। भिक्षार्थ दारोदारीं जाई। निजबोधाची जाग येई। अवलोकी ठायींच आपणा।।१२४।। प्रवृत्ति ही जी जागृतीं। तीच निवृत्ति स्वप्तस्थिती। खरी जागृती निजानुभूती। पूर्ण अद्वैतीं समरसणें।।१२५।। ज्ञानी अज्ञानी सर्व आश्रित। सर्वांवरी प्रेम अत्यंत। जीवाहूनि मानी आप्त। भेद ना तेथ यत्किंचित।।१२६।। मनुष्यरूपें देवचि होते। जरी हें आणिलें प्रचीतीतें। परी त्याचिया लडिवाळतेतें। बळी पडले ते समस्त।।१२७।। कोणासी दिधली धनसंपत्ति। कोणासी संसारसुख संतति। तेणें महान पडली भ्रांति। ज्ञानप्राप्तीस आंचवले।।१२८।। कधीं जयासवें हांसत। तया अंगी अभिमान दाटत। कीं तयावरीच प्रेम अद्भुत। इतरां न दावीत तें तैसें।।१२९।। तेंच कोणा क्रोधें वदतां। म्हणती न तो तयां आवडता। आम्हांविशींच अधिक आदरता। इतरां न देतात तो मान।।१३०।। ऐसेच आम्ही नंबर लावितां। बाबांच्या तें स्वप्नीहीं नसतां। उगाच नागवलों निजस्वार्था। कृतकर्तव्यता विसरलों।।१३१।। परब्रह्म सगुणमूर्ति। दैवें असतां उशागतीं। खऱ्या कार्याची होऊनि विस्मृति। विनोदीं प्रीति धरियेली।।१३२।। येतांच बाबांचे दर्शन घ्यावें। फळफूल अवघें समर्पावें। दक्षिणा मागतां मग कचरावें। नच रहावें ते ठायीं।।१३३।। सांगतां

हितवादाच्या गोष्टी। पाहुनी आमुची क्षुद्र दृष्टि। झालां वाटतें खरेंच कष्टी। गेलां उठाउठी निजधामा।।१३४।। आतां ती आपुली स्वानंदस्थिति। पुनश्च कां हे नयन देखती। गेली हरपली ती आनंदमूर्ति। जन्मजन्मांतीं अदृश्य।।१३५।। हा हा दारूण कर्म देखा। अंतरला ठाईचा साई सखा। निर्हेतुक दयार्द्र तयासारिखा। झाला पारखा आम्हांसी।।१३६।। ''बरें नव्हे कोणातें छळणें। तेणें येतें मजला दुखणें''। मना नाणिलें हें बाबांचें म्हणणें। केलीं भांडणें यथेच्छ।।१३७।। छळ करितां भक्तांभक्तां। आम्ही मुकलों कीं साईनाथा। होतो तयाचा अनुताप आतां। आठवती वार्ता तयांच्या।।१३८।। आठा वर्षाचा बाळ जनीं। प्रकट होईन मी मागुतेनी। ऐसें महाराज भक्तांलागुनी। आहेति सांगुनी राहिलो।।१३९।। आहे ही संतांची वाणी। वृथा मांनू नये कोणी। कृष्णावतारीं चक्रपाणी। केली करणी ऐसीच।।१४०।। आठ वर्षाची सुंदर कांति। चतुर्भुज आयुधें हातीं। देवकीपुढें बंदीशाळेप्रति। कृष्णमूर्ति प्रकटली।।१४१।। तेथें कारण भूभारहरण। येथें दीनभक्तोद्धारण। तरी किमर्थ शंकाजनन। अतर्क्य विंदान संतांचें।।१४२।। हा काय एका जन्माचा निर्बंध। बहात्तर पिढ्यांचा ऋणानुबंध। भक्तांचा बाबांनी पूर्वसंबंध। कथानुबंध कथियेला।।१४३।। ऐसें बांधुनी प्रेमफांसा। वाटती महाराज गेले प्रवासा। येतील मागुतेनी हा पूर्ण भरंवसा। भक्तमानसा झालासे।।१४४।। साक्षात्कार कित्येकांसी। दृष्टान्तानुभव बहुतेकांसी। चमत्कार तो अनेकांसी। गुप्तरूपेंसी दाविती।।१४५।। अभाविकां गुप्त असती। भक्तां भाविकां ठाईंचि दिसती। जैसी जयाची चित्तवृत्ति। तैसीचि अनुभूति रोकडी।।१४६।। चावडींत गुप्तरूप। मशिदींत ब्रह्मरूप। समाधींत समाधिरूप। सुखस्वरूप सर्वत्र।।१४७।। असो सांप्रत हाचि विश्वास। भक्तीं धरावा निज जीवास। भंग नाहीं समर्थसाईस। अक्षय रहिवास अखंड।।१४८।। देव जाती निजधामाप्रति। संतां ठायींच ब्रह्मस्थिति । गमनागमन ते नेणती। समरसती आनंदीं।।१४९।। म्हणोनि आतां हेचि विनंती। नम्रपूर्वक करितों प्रणती। साना थोरां अवधियांप्रती। सादर चित्तीं अवधारा।।१५०।। जडो उत्तमश्लोकसंगती। गुरूचरणीं निष्काम प्रीती। गुरूगुणानुकथनासक्ति। निर्मळ भक्ति प्रकट हो।।१५१।। जडो प्रिति अनवच्छिन्न। न होत स्नेहपाश भिन्न। असोत भक्त सुखसंपन्न। रांत्रदिन गुरूपदीं।।१५२।। असो पुढें त्या देहाचें उचित। करावें काय तें निश्चित। येच विचारीं जन समस्त। शिष्य ग्रामस्थ लागले।।१५३।। श्रीमंत बुट्टी मोठे भावुक। जणूं या पुढील भविष्याचें स्मारक। टोलेजंग वाडा सुखकारक। बांधूनि स्थाईक ठेविला।।१५४।। मग पुढें ते कलेवर। कुठें असावें या विषयावर। होऊनि छत्तीस तास विचार। घडलें होणार जें होतें।।१५५।। एक म्हणे या कलेवरासी। स्पर्शू न द्यावें आतां हिंदूंसी। मुसलमानांच्या कबरस्थानासी। समारंभेंसी नेऊंया।।१५६।। दुजा म्हणे हे कलेवर। ठेवावें नेऊनि उघड्यावर। थडगें एक बांधावें सुंदर। तयांत निरंतर रहावें हें।।१५७।। खुशालचंद अमीर शक्कर। यांचाही होता हाचि विचार। परी ''वाडियांत पडो हें शरीर''। होते हे उद्‌गार बाबांचे।।१५८।। पाटील रामचंद्र मोठे करारी। तेही एक ग्रामधिकारी। बाबांचे प्रेमळ सेवेकरी। वदती ते गांवकरियांसी।।१५९।। असोत तुमचे विचार कांही । समूळ कांही आम्हांतें मान्य नाही। वाड्याबाहेर इतरां ठायीं। क्षणभरीही साई ठेवूं नये।।१६०।। हिंदू आपले धर्मानुसार। मुसलमानही तैसाच विचार। योग्यायोग्य चर्चाप्रकार। सबंध रात्रभर जाहले।।१६१।। इकडे लक्ष्मणमामा घरीं। असतां पहांटे निद्रेच्या भरीं। बाबा तयांच्या धरूनि करीं । म्हणाले 'झडकरी ऊठ चल''।।१६२।। ''बापू साहेब न येणार आज। मी मेलों हा त्यांचा समज। तूं तरी काकड आरती मज। करीं पूजन समवेत''।।१६३।। तात्काळ नित्यक्रमानुसार। सवें घेऊनि पूजसंभार। लक्ष्मणमामा आले वेळेवर। पूजेसी सादर जाहले।।१६४।। ग्रामजोशी हे शिरडीचे। सखे मामा माधवरावांचे। पूजन करीत नित्य बाबांचें। प्रातःकाळाचे समयास।।१६५।। मामा मोठे कर्मठ ब्राह्मण। प्रातःकाळी करूनि स्नान। करूनि धूतवस्त्रपरिधान। घेत दर्शन बाबांचें।।१६६।। पादप्रक्षालन गंधाक्षत-चर्चन। पुष्पपत्री तुलसीसमर्पण। धूप दीप

नैवद्य नीरांजन। दक्षिणाप्रदान मग करिती।।१६७।। प्रार्थनापूर्वक साष्टांग नमन। होतां घेती आशीर्वचन। भग समस्तां प्रसाद देऊन। तिलक रेखून ते जात।।१६८।। तेथूनि पुढें गजानन। शनिदेव उमारमण। मारूतिराय अंजनीनंदन। यांचें पूजन करीत ते।।१६९।। ऐसे सर्व ग्रामदेवां। नित्य पूजीत जोशीबुवा। म्हणोनि साग्र पूजा त्या शवा। प्रेमभावा आणिली।।१७०।। मामा आधींच निष्ठावंत। तयावरी साक्षात हा दृष्टान्त। आले काकड आरती हातांत। केला प्राणिपात साष्टांग।।१७१।। मुखावरील वस्त्र काढून । करूनि सप्रेम निरीक्षण। करचरणक्षाळण शुद्धाचमन। सारिलें पूजन यथाविधि।।१७२।। मौलवी आदिकरूनि अविंध। स्पर्श कराया करिती प्रतिबंध। मामांनी न मानितां लाविलें गंध। पूजाही सबंध सारिली।।१७३।। शव तरी तें समर्थांचे। आपुल्या आराध्यदैवताचें। हिंदूचें की अविंधाचें। नाहीं मामांचे स्वप्नींही।।१७४।। पूज्य शरीर असतां सजीव। तया पूजेचा केवढा उत्सव। तेंचि आतां होतां शव। पूजावैभव ना औपचारिक।।१७५।। तशांत पाहूनि बाबांचे चिन्ह। आधींच मामा दुःखानें खिन्न। करूं आले अखेरचें पूजन। पुनर्दर्शन दुर्लभ।।१७६।। भरले अश्रूंहीं लोचन। करवेना त्या स्थितीचें आलोचन। हस्तपाद कंपायमान। उदास मन मामांचें।।१७७।। असो वळलेल्या मुठी उघडून। विडा दक्षिणा त्यांत ठेवून। शव तें पूर्ववत झांकून। मामा निघून मग गेले।।१७८।। पुढें मग दुपारची आरती। नित्याप्रमाणें मशिदींत वरती। बापूसाहेब जोग करिती। इतरांसमवेती साईंची।।१७९।। असो येथूनि पुढील वृत्त। पुढील अध्यायी होईल कथित। कैसा बाबांचा देह संस्कारित। अति प्रशस्त स्थानांत।।१८०।। कैसी तयांची अति आवडती। बहुतां वर्षांची सांगाती। वीट भंगतां दुश्चिन्हस्थिती। देहान्त सुचविती जाहली।।१८१।। कैसा जो आला प्रसंग आतां। बत्तीस वर्षांपूर्वीच येता। ब्रह्मांडीं प्राण चढविला असतां। कठिण अवस्था देहासी।।१८२।। कैसे भक्त म्हळसापती। अहोरात्र बाबांसी जपती। कैसी आशा सोडितां समस्तीं। अवचित मग पावती उत्थान।।१८३।। ऐसा आमरण ब्रह्मचर्य। आचरला जो योगाचार्य। जो ज्ञानियांचा ज्ञानिवर्य। काय तें ऐश्वर्य वानावें।।१८४।। असो ऐसी जयाची महती। करूं तया सद्भावें प्रणती। दीन हेमाड अनन्यगती। शरण तयाप्रती येतसे।।१८५। स्वस्ति श्रीसंतसज्जनप्ररिते। भक्तहेमाडपंतविरचिते। श्रीसाईसमर्थसच्चरिते। श्रीसाईनाथनिर्याणां नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः संपूर्णः।।

।। श्रीसद्गुरुसाईनाथार्पणमस्तु।। शुभं भवतु।।